पहल 121

पहल 121
मार्च : 2020

अव्यवसायिक
अनियतकालीन

संपादक : ज्ञानरंजन, राजकुमार केसवानी
संपादन सहयोग : राजेन्द्र दानी, पंकज
कला पक्ष : अवधेश बाजपेयी, संजय आनंद
आवरण : पिंकी कुमारी
वेबसाइट संपादक : कुलभूषण मिश्रा

प्रकाशक : पहल, जबलपुर
101, रामनगर, आधारताल
जबलपुर - 482004
टेलीफोन : 0761-2460393
मोबाईल : 09893017853
ई-मेल : edpahaljbp@yahoo.co.in
editorpahal@gmail.com

सौजन्य - सहयोग : अंतिका प्रकाशन प्रा. लि.
सी-56, यूजीएफ-4
शालीमार गार्डन एक्सटेंशन-2
गाजियाबाद-201005 (उ.प्र.)

अक्षर रचना : पीयूष जोधानी
मुद्रक : आर. के. ऑफसेट प्रॉसेस
शाहदरा, दिल्ली-110032

मूल्य : 50.00
वार्षिक : 300.00 (रजिस्ट्री समेत)
संस्थाएं : 400.00

कार्यालय, सम्पर्क और सूचना : मनोहर बिल्लौरे, मो. 8103777232

वेबसाइट : **pahalpatrika.com**

अनुक्रम

आशीष नंदी

गाँधी के बाद गाँधी

अनुवाद : राकेश कुमार मिश्र

(हमारे समय के महत्त्वपूर्ण चिंतक प्रो. आशीष नंदी को किसी एक विषय या अनुशासन से जोड़कर देखना बहुत मुश्किल है। पिछले चार दशक में उन्होंने लगभग तमाम अकादमिक विषयों पर लिखा है। बीस से ज्यादा किताबों के लेखक और संपादक प्रो. आशीष नंदी को गांधीजी पर लिखे लेखों के लिए भी जाना जाता है। इस अनुदित लेख में उन्होंने चार तरह के गाँधी के बारे में बात की है। सबसे दिलचस्प है चौथे प्रकार के गाँधी पर इस विद्वान के विचारों को जानना। इस गाँधी पर बात करते हुए प्रो. नंदी ने ये साफ-साफ कहा है की गाँधी को बहुत कम पढ़ा गया है। बल्कि गाँधी को लेकर जो हमारी समझ है वो सुनी-सुनाई बातों के आधार पर बनी है। बहुत थोड़े से लोग हैं जिन्होंने वाकई में गाँधी को पढ़ा है। संक्षेप में, हमारे समय के प्रतिष्ठित समाजशास्त्री और मनोवैज्ञानिक प्रो. आशीष नंदी का ये लेख गाँधीजी को पढ़ने, देखने और समझने के लिए कई नये रास्ते खोल देता है। प्रस्तुत लेख प्रो. आशीष नंदी के चर्चित लेख ''गाँधी आफ्टर गाँधी आफ्टर गाँधी'' का अंग्रेजी से हिंदी अनुवाद है। ये लेख प्रतीक कांजीलाल और अंतरा देव सेन के संपादन में निकलने वाली अंग्रेजी पत्रिका द लिटिल मैगज़ीन के प्रवेशांक (मई, 2000) में छपा था। अनुमति प्रदान करने के लिए प्रो. आशीष नंदी और प्रतिक कांजीलाल जी, दोनों का आभार)

चार तरह के गाँधी हैं जो मोहनदास करमचंद गाँधी (1869-1948) के देहांत के बाद भी जीवित हैं। गाँधी की हत्या के पचास साल बाद, उनकी पहचान करना दिलचस्प होगा। हो सकता है की ब्रिटिश पुलिस ने ये काम अपने औपनिवेशिक समय में किया हो। ये चार तरह के गाँधी परेशान करने वाले हैं। लेकिन ये अलग-अलग लोगों को अलग-अलग कारणों और तरीकों से परेशान करते हैं। आम जीवन में इनका उपयोग भी चार अलग-अलग तरीकों से किया जाता है। ये बात मैं किसी दु:ख के साथ नहीं, बल्कि प्रशंसा

के भाव से कह रहा हूँ। अपने जन्म के 130 साल बाद और अपने मृत्यु के 50 साल बाद भी, अगर कोई आपको परेशान करने की काबलियत रखता है, या किसी की उपयोगिता बनी हुई है तो ये कोई मामूली उपलब्धि नहीं है। साफ-साफ कहूँ, तो मैं इसकी परवाह नहीं करता कि असल में गाँधी क्या थे या क्या हैं ? ये मुद्दा मैं तमाम बौद्धिकों के लिए छोड़ देना चाहता हूँ। समकालीन राजनीति इतिहास के 'सत्यों' को लेकर नहीं है बल्कि उस अतीत को लेकर है जो हमें याद है, और एक ऐसे भविष्य को बनाने की समस्याओं को लेकर है जो सामूहिक स्मृतियों पर आधारित है। चाहे इसे अच्छा माना जाए या बुरा, पर गाँधी ने उन स्मृतियों में जगह बना ली है। साथ ही, शुरू में ही अपनी दो सीमाओं की घोषणाएँ। पहला, मैं गांधीवादी नहीं हूँ। मेरे विचारों को नहीं बल्कि गांधीवाद को देखा जाए क्योंकि मेरा मानना है कि गाँधी की तुलना में गांधीवाद बहुत बड़ा है। गाँधी ने इसे कम या ज्यादा माना भी, और अपने विचारों का पूरा श्रेय प्राचीन बौद्धिकता को दिया है। और यह स्वीकार करने से गाँधी छोटे नहीं हुए।

असल में, गाँधी हमारे सामने मनुष्य के रूप में सामने आते हैं। एक ऐसा मनुष्य जिसका अपना 'स्व' था। गाँधी अपने सिद्धान्तों को इसलिए भी नहीं जी पाए क्योंकि आंशिक रूप में वो एक व्यवहारिक राजनेता थे और राजनीति का काम ही होता है आदर्शवादी और नैतिक शुद्धता के असर को कम करना। अपनी पसंदीदा सराहना का उपयोग करूँ तो, गाँधी की मृत्यु पर अपने श्रद्धा लेख में अर्नाल्ड टॉयन्बी ने लिखा था गाँधी एक ऐसे मसीहा थे जो राजनीति की गन्दगी में अपनी इच्छा से रहे। वो एक परिपूर्ण गांधीवादी होना वहन नहीं कर सकते थे। जब कोई उन्हें दोषपूर्ण गाँधी कहता है तो वास्तव में यह उनकी स्मृति के प्रति एक प्रशंसा का भाव है। दूसरी बात, असाध्य विद्वत्ता को ध्यान में रखते हुए यहाँ स्पष्ट कर दूँ की जिस तरह के गाँधी की बात मैं कर रहा हूँ वो वेबेरियन ढांचे को दिखाते हैं। ये विश्लेषण के अलग-अलग यंत्र हैं, साथ ही कैरिकेचर भी। इसका अर्थ है ये वास्तविक नहीं है, पर असत्य भी नहीं है। इस तरह से सोचते हुए मैं महत्वपूर्ण साहित्य आलोचक डी.आर. नागराज से प्रभावित रहा हूँ जो विलियम ब्लेक से सहमत होते हुए, ये मानते थे कि एक खास तरह की शैलीगत अतिशयोक्ति भी ज्ञान तक पहुँचने की पगडंडी बन सकती है।

अब हमारे सामने उपलब्ध चार तरह के गाँधी पर बात की जाए। इन चार तरह के गाँधी को लगभग सभी अच्छी तरह जानते हैं। मैं बस उस अनकहे ज्ञान पर प्रकाश डाल रहा हूँ। साथ ही, एक मनोवैज्ञानिक के तौर पर ये जिम्मेदारी भी महसूस करता हूँ की मैं लोगों को आगाह कर दूं कि एक ऐसा सत्य जो उपलब्ध तो है, पर अनकहा है, वो ज्यादातर परेशान करने वाला और बहुत तकलीफदेह होता है।

पहला गाँधी: वह गाँधी हैं जिसे भारतीय गणराज्य और राष्ट्रवाद ने बनाया है। मुझे लगता है गाँधी के इस रूप को पचा पाना बहुत मुश्किल है और मेरा विश्वास है कि स्वयं गाँधी के लिए भी इसे पचाना बहुत मुश्किल होता। लेकिन बहुत लोगों को गाँधी का सिर्फ

यहीं रूप बर्दाश्त होता है और वो इसके साथ खुशी-खुशी रहते भी हैं। इस सरकारी गाँधी का राजनीतिक कैरियर पहले ही शुरू हो गया था। भारत की स्वतंत्रता के बाद, गाँधी का राष्ट्रपिता के रूप में मौजूद रहने, और उनकी स्मृतियों और लेखन ने भारतीय गणराज्य को बहुत चुनौतीपूर्ण बना दिया। ये उन बौद्धिकों के लिए और भी चुनौतीपूर्ण लगने लगा जो भारतीय जनतंत्र पर मक्खियों की तरह मंडरा रहे थे। ये सिर्फ इसलिए नहीं हुआ की एक ख़ास तरह की अराजकता गाँधी के सोच में थी बल्कि इसका एक बड़ा कारण ये था कि इस गाँधी ने पब्लिक और प्राइवेट, धार्मिक और सेक्युलर, वर्तमान और अतीत के साफ-साफ अंतर को नकार दिया और ये गाँधी इन बौद्धिकों के लिए असली सिर दर्द का कारण बने। ये बौद्धिक लोग उतने ही परेशान थे जितना की गाँधी की हत्या करने वाला नाथूराम गोडसे। नाथूराम गोडसे जो अपने को तर्कवादी और आधुनिक मानता था, उसने कोर्ट को दिए गए अपने अंतिम बयान में कहा कि उसने ये पितृहत्या इसलिए की क्योंकि वो भारत जैसे नवजात देश को एक पिछड़े और पागल आदमी के हाथों से बचाना चाहता था। भारत की स्वतंत्रता के बाद गाँधी के अपने करीबी सहयोगियों ने उन्हें एक छ:फुट खड्डे में दफना दिया और उनकी राष्ट्रीय पहचान को भारतीय गणराज्य के साथ रहने दिया। गाँधी के सहयोगियों ने ये इसलिए नहीं किया की ये लोग गाँधी को नापसंद करते थे बल्कि गाँधी दूसरे विश्वयुद्ध के बाद के वातावरण में जब केन्द्रित राज्यों, सोशल इंजीनियरिंग और 'यथार्थवादी' अन्तराष्ट्रीय राजनीति की बात हो रही थी, तब गाँधी बहुत पुराने लग रहे थे। तब से लेकर आज तक, दक्षिणपंथी या वामपंथी राजनीतिज्ञों ने कभी नाथूराम गोडसे के इस ऋण को स्वीकार नहीं किया जिसके कारण गाँधी को असमय शहादत और संत का दर्ज़ा मिला और जिसने गाँधी के राजनीतिक उपस्थिति को ख़त्म कर दिया। गाँधी के सोच पर चलने वाले भी उनके विरोध में रहे, ये कहते हुए की वो कई बार उनके आभार को स्वीकार नहीं कर पाते और गाँधी अपने ऊपर लादी गई संत रूपी महानता को उतार फेंकते हैं। ये कुछ-कुछ गाँधी को व्यर्थ साबित करने की कोशिश है। बहुत उम्मीद है कि अगर गाँधी होते तो इस मुद्दे पर अपने पोते और दार्शनिक रामचंद्र गाँधी से एकदम अलग सोचते। ये वो गाँधी हैं जिनके बारे में दिल्ली शहर के बाशिंदों को बताया जाता है की अब गाँधी इंडिया गेट पर किंग जॉर्ज पंचम द्वारा खाली किये गए तख़्त पर जगह लेंगें। इस चरमराते हुए गणतंत्र में गाँधी का ये आखिरी राज्याभिषेक होगा। ठीक इसके पहले दूसरे विश्वयुद्ध के आखिरी दिनों में सुभाषचंद्र बोस ने इंडियन नेशनल आर्मी के एक ब्रिगेड का नाम गाँधी के नाम पर रखा था। भारतीय गणतंत्र की लगातार ख़राब होती स्थिति और हमारे आस-पास में पश्चिम के प्रभाव से पनपी विभिन्न राष्ट्रवादी लहरों के कारण भारत में अब इस गाँधी की सेहत अच्छी नहीं है। जो काम नाथूराम गोडसे नहीं कर पाया वो काम हिन्दू राष्ट्रवाद के दो प्रमुख नेता बाल ठाकरे और लालकृष्ण आडवाणी ने बाबरी मस्जिद तोड़वाकर किया।

दूसरा गाँधी- ये वो गाँधी हैं जो गांधीवादियों ने अपने लिए बनाया है। जो इस समय बीमारू हालत से गुज़र रहे हैं। गांधीवादियों के गाँधी को एक खास प्रेम से देखा जाता है

बल्कि ये कुछ-कुछ पुश्तैनी सम्बन्ध जैसा है। गाँधी के इस रूप को एक खास बोरियत से जोड़कर भी देखा जाता है, एक ऐसा शुद्धतावादी विक्टोरियन आदमी जो गलती से भारत में पैदा हुआ था। जिसकी उपस्थिति भारत के लोगों की स्मृतियों में देखी जा सकती है। गांधीवादियों के गाँधी कोका कोला और कैम्पा कोला के बजाए निम्बु पानी पीते हैं और हाथ से बुनी खादी पहनते हैं। लेकिन एक चीज है जो ये दूसरे तरह के गाँधी नहीं करते। ये कभी राजनीति को नहीं छूते। असल में, वे राजनीति को छू भी नहीं सकते। जब तक भारत सरकार की तरफ से गाँधी के नाम पर चलाये जा रहे आश्रम, खादी और गाँधी के नाम पर होने वाले पारम्परिक गोष्ठियों के लिए अनुदान मिलना ना बंद हो जाए। इन गांधीवादी गोष्ठियों में एक खास बैठकबाज़ी होती है जिसमें राजनीति में बढ़ रहे अपराधीकरण, असंतुलित विकास या इस देश में लगातार बढ़ रहे भ्रष्टाचार पर शोक जताया जाता है। किसी व्यक्ति विशेष या पार्टी का नाम लिए बिना इन गोष्ठियों में सरकार के कामों पर सभी लोग छाती पीट-पीटकर खूब रोते हैं। इस तरह की गोष्ठियों के बाद हर व्यक्ति खुश नज़र आता है। यहाँ तक की अपराध में डूबे कई नेता इन गोष्ठियों में ताली पीटते नज़र आते हैं। इस दूसरे तरह के गाँधी को गांधीवादी गाँधी के विचारों पर उपदेश देने के लिए अपने साथ पूरे दुनिया भर में लेकर घूमते हैं। ये दूसरे तरह के गाँधी गाँधीवादियों के माध्यम से भारत की आम जनता से बहुत कम मिल पाते हैं। असल में, भारत में इस दूसरे गाँधी को सुनने वाले श्रोताओं की संख्या भी बहुत कम होती है। यहाँ तक की श्रोताओं का ये छोटा समूह नींद में डूबा हुआ, लापरवाह और थका हुआ गाँधी के बारे में इन प्रवचनों को सुनता रहता है। ये लोग इसलिए आते हैं क्योंकि इन लोगों से उम्मीद की जाती है की वो इन गोष्ठियों में दिखें। इन गांधीवादियों की औसत उम्र 100 साल के आस-पास होगी और श्रोताओं की औसत उम्र भी इससे ज्यादा नहीं होगी। इन गांधीवादियों का इस तरह से सोचने का बड़ा कारण ये है कि उन्हें लगता है कि भारत के लोगों ने गाँधी को भूला दिया है। ऐसे लोग जो इस तरह के गांधीवादियों को थोड़ा कम सम्मान से देखते हैं, वो मानते है कि ये गांधीवादी, गाँधी और भारत के लोगों, दोनों को समझने में असमर्थ रहे हैं। इस तरह के लोग ये भी मानते हैं की बाबा आमटे, अन्ना हज़ारे और सुन्दरलाल बहुगुणा जो दिन रात गाँधी का नाम लेते हैं, वो अगर किसी और रास्ते पर चले होते तो ज्यादा बेहतर होता।

तीसरा गाँधी: ये तीसरा गाँधी उन लोगों के गाँधी हैं जो गुदरियों से ढके हुए, कुछ-कुछ सनकी और किसी अनुमान से बाहर हैं। ये वो गाँधी हैं जो स्कॉच विस्की के बजाए कोका-कोला को ज्यादा नफरत से देखता है और मानता है कि भारत में बनने वाला कोका-कोला विदेश से आने वाले कोका-कोला से ज्यादा ख़तरनाक है। ये इसलिए हैं क्योंकि इन बनावटी खाने-पीने की चीजों का जो विरोध है वो एक तरह से सतही ही है। वो जानते हैं की भारतीय आर्थिक तंत्र में अगर इन वस्तुओं को जगह मिलती है तो ये खतरनाक होगा। वो इस बात को अलग-अलग तरीकों से कहते हैं। अगर इसे नकली राष्ट्रवाद ना माना जाए तो, वो ऐसे भारतीयों के लिए कोका-कोला और पेप्सी का आयात करेंगे जो

इनके बिना नहीं रह सकते। ये बात अलग है की बाद में इन पर कैम्पा-कोला ही लिखा जाएगा, जो की एक भारतीय कंपनी है। ये गाँधीवादी गाँधी के हिन्द स्वराज को बहुत महत्त्वपूर्ण मानते हैं। ये घुम्मकड़ होते हैं। ये वो गाँधी हैं जो वंदना शिवा के दिमाग में था चाहे वो इसे भले ना जानती हों, जब उन्होंने नीम के विभिन्न प्रजातियों के पेटेंट अधिकार को लेकर एक अमेरिकी कोर्ट में याचिका दायर की थी। ये वहीं गाँधी हैं, जिसने मेधा पाटकर का नर्मदा बांध के खिलाफ चलाया गया परेशान करने वाले आन्दोलन को रास्ता दिखाया। साथ ही, ये वो गाँधी हैं जिसने क्लॉउदे अल्वारेस को ऑपरेशन फ्लड और वंदना शिवा को हरित क्रांति के खिलाफ चलाये गये आन्दोलन में मार्गदर्शक की भूमिका निभाई है। और ये वो गाँधी हैं जो लेखक, नर्तक और चिन्तक शिवराम कारंत के भीतर उनके जीवन के अंतिम पड़ाव पर जिंदा था, जब वो भारत का एक पागलपन के तहत किये जा रहे परमाणु विस्तार के खिलाफ लगातार बोल रहे थे। इस गाँधी के कुछ क्रांतिकारी जुड़ाव भी है। इस गाँधी को व.म. तार्कुंदे जैसे आलोचकों के साथ रहना पसंद है, जिन्होंने गाँधी के नज़रिए पर सवाल उठाए। इस गाँधी को पाकिस्तानी एक्टिविस्ट आसमाँ जहांगीर के साथ ही देखा जा सकता है, ये वो लोग हैं जिन्होंने भारतीय राजनीति को दो दशक से ज्यादा समय तक चलाया है। इस गाँधी के साथ जो लोग संगत करते हैं उनकी औसत उम्र कम है और ये और भी कम होती पर तार्कुंदे और कुलदीप नैयर जैसे दिल से जवान लोगों ने उम्र को लम्बा खींच दिया है। ये गाँधी और इनके जवान दोस्त भारत के रक्षा हितों और वैज्ञानिक तरक्की के सामने एक उपद्रव का काम करते हैं। ये लोग उस सामान्य समझ को जोखिम में डाल देते हैं, जो आगे से आगे चलता रहता है। अगर मैं अपने गुरु सिगमंड फ्रायड के शब्दों में कहूँ तो ये लोग 'प्रतिदिन के आमजीवन के मनोविज्ञान' को जोखिम में डाल देते हैं। गाँधी के इस रूप और उनके जबरदस्त लापरवाह जवान दोस्तों को लेकर मेरी अपनी निजी राय है। अपनी जिंदगी में ऐसी बहुत सी चीजें जो मैंने की हैं ये जवान लोग मुझसे बेहतर कर रहे हैं। ये मेरे दुश्मन होने के बावजूद कहना चाहता हूँ की अब तक मैंने जो किया है या कहा है वो मेरे मृत्यु के बाद इन जवान लोगों के द्वारा ज्यादा बेहतर तरीके से किया जाएगा। ये मुझे खुशी देता है कि अपनी मौत के बाद भी मैं अपने दुश्मनों को परेशान करता रहूँगा। इस गाँधी के लिए खादी पहनना या शराब से दूर रहना ज़रूरी नहीं है। ये गाँधी अधिकतर ब्लू जीन्स और खादी का कुर्ता पहनते हैं। इंडिया टुडे के पत्रकार रमिंदर सिंह ने इस तरह के गाँधीवादियों के बारे में लिखा भी है, जो खुद भी एक झोला लेकर चलते हैं। अब कई लोग इस पर संदेह करते हैं की इस गांधी का अपनी जन्मभूमि गुजरात से बहुत धुंधला सा सम्बन्ध रह गया है। जिस राज्य ने उनको छोड़ दिया है, हो सकता है कि उस राज्य को अब वो छोड़ दें। मेरे भीतर एक डर ये भी है की ये गांधी जिस संगति में पड़ गए हैं, वो आने वाले दशकों में निहायती पढ़े-लिखे, समझदार और तार्किक लोगों के लिए जानलेवा दर्द का कारण बनेंगें। ताइवान के मानव विज्ञानी और कार्यकर्ता फ्रेड चिऊ अक्सर उस पुरानी बात को याद दिलाते हैं रहते हैं कि ***जहाँ-जहाँ सभ्यता जाती है, वहाँ-वहाँ अपने साथ दंश***

लेकर जाती है। चिऊ का दावा है कि जहाँ भी वैश्विक पूंजीवाद जाता है, वो अपने साथ पोलिटिकल एक्टिविज्म, गैर सरकारी संगठन (एन.जी.ओ) और झोलावालों को साथ ले जाता है। जो मौका मिलते ही बड़ी कंपनियों के निवेशकों और मालिकों को परेशान करते हैं। वैश्विक पूंजीवाद का फायदा उठाने वाले और ये बड़े उद्योगपति अब पूँजीवाद की छुपी कीमत को पहचान पा रहे हैं। साफ-साफ कहूँ तो मैं इन लोगों की तारीफ करता हूँ जिनके भीतर इतना साहस है।

चौथा गाँधीः- ये वो गाँधी हैं जिसे ज्यादातर नहीं पढ़ा जाता। जिसके बारे में लोग सिर्फ सुनते हैं। मार्टिन लूथर किंग जैसे थोड़े से लोग हैं जिन्होंने गांधी का सावधानीपूर्वक मूल्यांकन किया है और जिन्होंने गांधी के लेखन का इस्तेमाल किया। जबकि बाकी लोगों को ये तक नहीं पता की गाँधी ने क्या लिखा था? और ना हीं उन्हें इस बात से कोई फर्क पड़ता है। ये कुछ इसी तरह का रवैया है जो दिवंगत वरिष्ठ कम्युनिस्ट नेता ए.के.गोपालन का कार्ल मार्क्स को लेकर था। इस कम्युनिस्ट नेता ने एक बार साफ-साफ कहा था कि उन्होंने कभी मार्क्स को नहीं पढ़ा क्योंकि वो मानते थे की पढ़ने के बाद भी मार्क्स को नहीं समझ पायेंगे। इसके बावजूद वो आजीवन मार्क्सवादी बने रहे। गाँधी का ये प्रकार मिथकीय है। असल ज़िंदगी से अलग, ये गाँधी अपने सिद्धांतों पर टिके रहते हैं। कम से कम पर्यावरण और नारीवादी आन्दोलन से जुड़े गांधी के प्रशंसक तो यही मानते हैं। गाँधी के जीवन के 'यथार्थ' गांधीवादी सिद्धांतों से निकलकर आए हैं, जो पूरी दुनिया भर में किसी दंतकथा या महाकाव्य की तरह फैले हैं।

कुछ साल पहले एक अमेरिकी स्तंभकार रिचर्ड ग्रेनिएर ने रिचर्ड अटेनबर्ग की फ़िल्म गाँधी (1982) की भरपूर लोकप्रियता के संदर्भ में बात करते हुए, गाँधी के ज़िंदगी और दर्शन के बीच के अंतर को बताते हुए गाँधी का असली रूप दिखलाने की कोशिश की थी।

1980 के दशक में जब पोलिश मज़दूरों ने अपने तानाशाही हुकूमत के खिलाफ आवाज़ उठाई तो उन्होंने लेच वालेसा को अपना गाँधी कहा, एक ऐसी उपमा जो हो सकती है कि इस ट्रेड यूनियन नेता को निगलने में मुश्किल हुई हो। लेकिन इन पोलिश मज़दूरों की रुचि सिर्फ गाँधी और लेच वालेसा से जुड़े ऐतिहासिक समानता या असमानता में नहीं थी। बल्कि वो कुछ और कहना चाहते थे। वो कह रहे थे की किस तरह गाँधी अपने अहिंसा रूपी हथियार के साथ तानाशाहों और सामंतों के सामने प्रतिरोध का प्रतीक हैं। साथ ही, गाँधी का ये रूप इन लोगों के लिए भी एक प्रतीक है जो लगातार अन्याय के खिलाफ संघर्ष कर रहे हैं। जब फिलीपींस में बेनितो अकुइनो की हत्या हुई तो प्रदर्शनकारियों ने मनाली में कुछ वैसा ही किया जो पोलिश मज़दूरों ने ग्दान्स्क में किया था। उन्होंने नारा लगाया, ''बेनितो, हमारा गाँधी''। हो सकता है की ये मात्र एक संयोग हो, पर कुछ साल पहले बर्मा

में विद्यार्थियों ने सैनिक प्रशासन के खिलाफ़ विरोध करते हुए गाँधी को ठीक इसी तरह याद किया। अंतर इतना ही था कि इन विद्यार्थियों के सामने ऑग सन सुई क्यी जैसा नेता थी, जिन्होंने भले ही गाँधी को नहीं पढ़ा था, पर फिर भी उन्हें गांधीवादियों के श्रेणी में रखा गया। अलग-अलग समय में ये तमगा खान अब्दुल गफ्फार खान से लेकर नेल्सन मंडेला तक अलग-अलग लोगों को दिया गया। गाँधी का जो चौथा रूप है वो सत्ता को चुनौती देता हुआ इस दुनिया की अनेक गलियों से गुज़र रहा है। ये तनाशाह गाँधी को बहुत हल्के में लेते हैं क्योंकि गाँधी के पास अपने बचाव के लिए कोई हथियार नहीं है और ये पेशेवर क्रांतिकारी उनका मज़ाक उड़ाते हैं क्योंकि गाँधी अहिंसा की बात करते हैं। लेकिन इन तानाशाहों और क्रांतिकारियों को हर बार इस हल्के आंकलन के लिए कीमत भी चुकानी पड़ती है। एक लम्बे समय अंतराल में देखें तो, इन तानाशाहों को इस बात से संतोष मिलता है की इनके शासन में आते ही इनके खिलाफ नियोजित क्रांति असफल हो जाती है। इसका कारण किसी के पास नहीं है पर ये क्रांतियाँ इनके बच्चों को शारीरिक और नैतिक, दोनों ही रूप से खा जाती हैं। आजकल के क्रांतिकारियों को देखें तो ये ज्यादातर रंग-बिरंगे अधेड़ लोगों का झुण्ड होता है। एक ऐसा आरामपरस्त और स्वार्थी बौद्धिक जो विश्वविद्यालयों में आराम की नौकरी करता है। जो अपने को संतोष दिलाता है कि वो गांधीवाद की ऐतिहासिक सीमाओं को लेकर गोष्ठियां कर रहे हैं, जिनमें गाँधी की मौत की घोषणा पहले ही हो चुकी है। लेकिन जैसे ही इस तरह की गोष्ठियां खत्म होती है, ये मिथकी गाँधी दुनिया की दूसरी गलियों और झोपड़ियों में प्रवेश कर चुके होते हैं, ऐसे लोगों को रास्ता देने के लिए जो उन पर निर्भर हैं।

ये चार तरह के गाँधी मैंने आपके सामने रख दिए हैं। ये आपके ऊपर है की आप इनमें से कौन सा गाँधी चुनते हैं। लेकिन ये ज़रुरी नहीं की आप इनमें से किसी एक गाँधी को चुने ही। शायद ये सबसे समझदारी का काम हो। पर ये गाँधी के लिए खतरनाक हो सकता है। ज्यादा बेहतर ये है कि आप उनकी तस्वीर अपने ऑफिस या घर में लगायें, जैसा की कई लोग करते हैं और गांधी के रूप में मिले देवता के प्रति अपना सम्मान दिखायें। और उनके जन्मदिन पर मिलने वाली छुट्टी पर अपने बच्चों को पिकनिक पर ले जाएं।

भारत के महत्वपूर्ण समाजशास्त्री और मनोवैज्ञानिक प्रो. आशीष नंदी का अकादमिक कैरियर सीएसडीएस, दिल्ली से नज़दीकी तौर पर जुड़ा रहा है। वे सन् 1992-97 के बीच इसके निदेशक रहे और अब सीएसडीएस के मानद सीनियर फ़ैलो है। कई किताबों के लेखक और अनेक सम्मानों से सम्मानित प्रो. नंदी को हाल ही में कोह्लर फाउंडेशन, जर्मनी की ओर से वर्ष 2019 का हैन्स किलियन पुरस्कार दिया गया है।
राकेश कुमार मिश्र - पिछले दस सालों से रंगमंच,साहित्य और अनुवाद की दुनिया में सक्रिय। 'शेष', 'परिकथा', सवंदिया' और 'अकार' में कवितायें प्रकाशित। 'जानकी पुल', 'दखल की दुनिया' और 'हिंदी टेक' पर अनुवाद प्रकाशित। 2016 में नाटक 'उम्मीद का गीत' का लेखन और निर्देशन। संपर्क - मो. 08758127940, विसनगर, जिला - मेहसाणा, गुजरात

23:05

ugccare.unipune.ac.in/Apps

UGC-CARE List

Journal Title (in English Language)	Pahal (print only)
Journal Title (in Regional Language)	पहल (print only)
Publication Language	Hindi
Publisher	Pahal Jabalpur
ISSN	NA
E-ISSN	NA
Discipline	Arts and Humanities
Subject	Arts and Humanities (all)
Focus Subject	Lite[r] Lite[r] The[o]